[2013] 4 उम. नि. प. 128

देवकी पंझीयारा

बनाम

शशि भूषण नारायण आज़ाद और एक अन्य

12 दिसम्बर, 2012

न्यायमूर्ति पी. सदाशिवम् और न्यायमूर्ति रंजन गोगोई

घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 (2005 का 43) – धारा 12 [सपठित हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) की धारा 11] – पत्नी द्वारा भरणपोषण का दावा – पति द्वारा इस आधार पर भरणपोषण के दावे से इनकार करना कि उनका विवाह शून्य था – जब पत्नी के भरणपोषण संबंधी दावे का पति द्वारा इस आधार पर विरोध किया जाता है कि उनका विवाह शून्य था क्योंकि पत्नी का पूर्व विवाह अस्तित्व में था तब पति द्वारा अपने दावे के समर्थन में पत्नी के पूर्व विवाह का प्रमाणपत्र पेश करने मात्र से पत्नी के भरणपोषण संबंधी दावे से इनकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि न्यायालय भरणपोषण की सांपार्श्विक कार्यवाहियों में विवाह को शून्य अभिनिर्धारित करके पत्नी के दावे से इनकार नहीं कर सकता है ।

घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 (2005 का 43) – धारा 11 – शून्य विवाह – यद्यपि विवाह के पक्षकारों के लिए अपने विवाह को अकृत और शून्य घोषित कराना वैकल्पिक है तथापि, किन्हीं परिस्थितियों में पक्षकारों की वैवाहिक स्थिति का विनिश्चय करने के लिए इसे आवश्यक बनाया जा सकता है ।

अपीलार्थी ने, जिसका प्रत्यर्थी से वर्ष 2006 में विवाह हुआ था, घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 की धारा 12 के अधीन एक याचिका फाइल की थी जिसमें, नुकसानी और भरणपोषण सहित कतिपय अनुतोषों की ईप्सा की गई थी । अपीलार्थी ने उपर्युक्त आवेदन के लंबित रहने के दौरान अंतरिम भरणपोषण के लिए एक आवेदन फाइल किया था जो कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा 2,000 रुपए प्रति मास की दर पर मंजूर किया गया था । विद्वान् विचारण न्यायालय के आदेश को विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा अभिपुष्ट कर दिया गया था । प्रत्यर्थी (पति) ने उपर्युक्त आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका

फाइल की । जब रिट याचिका लंबित थी, तब प्रत्यर्थी ने इस आधार पर विचारण न्यायालय के आदेश को वापस लेने की ईप्सा की कि उसे बाद में इस बात का पता चल सका था कि अपीलार्थी के साथ उसका विवाह इस आधार पर शून्य था कि उक्त विवाह के समय अपीलार्थी का रोहित कुमार मिश्रा नामक व्यक्ति से पहले ही विवाह हो चुका था । प्रत्यर्थी-पति ने इसके समर्थन में विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष सक्षम प्राधिकारी द्वारा विशेष विवाह अधिनियम, 1954 की धारा 13 के अधीन अपीलार्थी और उक्त रोहित कुमार मिश्रा के बीच तारीख 18 अप्रैल, 2003 को हुए विवाह का प्रमाणपत्र प्रस्तुत किया था । विद्वान् विचारण न्यायालय ने उपर्युक्त आवेदन को इस आधार पर नामंजूर कर दिया कि 1954 के अधिनियम की धारा 13 के अधीन जारी किए गए प्रमाणपत्र के होते हुए भी अधिनियम की धारा 15 में प्रगणित शर्तों की विद्यमानता का सबूत पेश किया जाना अब भी अपेक्षित होगा और इसके पश्चात् ही अधिनियम की धारा 13 के अधीन जारी किए गए प्रमाणपत्र को विधिमान्य ठहराया जा सकता है । उपर्युक्त आदेश को प्रत्यर्थी-पति द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन में चुनौती दी गई थी जिसकी सुनवाई इसके पूर्व फाइल की गई रिट याचिका के साथ की गई थी । दोनों ही मामलों का निपटारा आक्षेपित सामान्य आदेश द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए किया गया था कि 1954 के अधिनियम की धारा 13 के अधीन जारी किया गया विवाह प्रमाणपत्र अपीलार्थी का रोहित कुमार मिश्रा नामक व्यक्ति के साथ प्रथम विवाह होने का निश्चित सबूत है जिसका प्रभाव अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच हुए विवाह को अकृत और शून्य करना था । तदनुसार, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि चूंकि अपीलार्थी प्रत्यर्थी की विधिक रूप से विवाहित पत्नी नहीं थी इसलिए वह विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा अनुदत्त भरणपोषण की हकदार नहीं थी । उच्च न्यायालय के उपर्युक्त आदेश के विरुद्ध अपीलार्थी-पत्नी द्वारा प्रस्तुत अपीलें फाइल की गई हैं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलें मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – स्वीकृततः, अपीलार्थी और प्रत्यर्थी दोनों हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के उपबंधों द्वारा शासित होते हैं । हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 11 में यह स्पष्ट किया गया है कि इस अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात् अनुष्ठापित कोई भी विवाह, "यदि वह धारा 5 के खंड (i), (iv) और (v) में विनिर्दिष्ट शर्तों में से किसी एक का भी उल्लंघन करता हो तो, अकृत और शून्य होगा और विवाह के किसी पक्षकार द्वारा दूसरे

पक्षकार के विरुद्ध उपस्थापित अर्जी पर अकृतता की डिक्री द्वारा ऐसा घोषित किया जा सकेगा ।" यद्यपि पूर्वोक्त अधिनियम की धारा 11 शून्य विवाह के किसी भी पक्षकार को ऐसे विवाह को अविधिमान्य/अकृत करने की घोषणा की ईप्सा करने का विकल्प प्रदान करती है तथापि, ऐसे विकल्प का प्रयोग करने के बारे में यह नहीं समझा जा सकता है कि वह सभी स्थितियों में स्वेच्छया है । ऐसी स्थितियां उद्‌भूत हो सकती हैं जब सामान्य नियम से विचलन करते हुए किसी ऐसे विवाह की अकृतता की घोषणा करने के संबंध में न्यायालय का सहारा लेने पर जोर दिया जा सकता है जिसमें पति-पत्नी में से एक द्वारा विवाह के शून्य होने का दावा किया गया है । (पैरा 18)

प्रस्तुत मामले में, यदि प्रत्यर्थी के अनुसार उसके और अपीलार्थी के बीच विवाह अपीलार्थी और रोहित कुमार मिश्रा के बीच पूर्व विवाह के कारण शून्य हो गया था तो अपीलार्थी द्वारा उपर्युक्त मुद्दे पर उठाए गए अत्यंत विवादास्पद प्रश्नों को ध्यान में रखते हुए प्रत्यर्थी को सक्षम न्यायालय से आवश्यक घोषणा प्राप्त करनी चाहिए थी । सक्षम न्यायालय द्वारा पक्षकारों के बीच विवाह की अकृतता या बातिलीकरण की घोषणा के पश्चात् ही इस प्रश्न पर विचार करना न्यायोचित होगा कि क्या पक्षकार "विवाह की प्रकृति की नातेदारी" में एक साथ रहे थे । अकृतता की किसी विधिमान्य डिक्री या आवश्यक घोषणा के अभाव में न्यायालय को इस आधार पर कार्यवाही करनी होगी कि पक्षकारों के बीच नातेदारी विवाह की है न कि विवाह की प्रकृति की । पक्षकारों के बीच विवाह की विधिमान्यता का कोई भी निर्धारण पक्षकारों द्वारा और उनके बीच किसी समुचित कार्यवाही में किसी सक्षम न्यायालय द्वारा विधि की अन्य सभी अपेक्षाओं का अनुपालन करते हुए किया जा सकता था । अपीलार्थी और रोहित कुमार मिश्रा के दावाकृत पहले विवाह के समर्थन में विशेष विवाह अधिनियम, 1954 की धारा 13 के अधीन जारी किया गया विवाह प्रमाणपत्र प्रस्तुत करना मात्र किसी भी न्यायालय के लिए, जिसमें उच्च न्यायालय भी है, पक्षकारों की वैवाहिक स्थिति के संबंध में और वह भी भरणपोषण के लिए की गई किसी सांपार्श्विक कार्यवाही में संपूर्ण और प्रभावी विनिश्चय करने के लिए पर्याप्त नहीं था । परिणामस्वरूप, प्रस्तुत मामले में जब तक अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह का अविधिमान्यकरण किसी सक्षम न्यायालय द्वारा नहीं हो जाता है तब तक इस आधार पर कार्यवाही करना ही सही होगा कि अपीलार्थी प्रत्यर्थी की पत्नी बनी हुई है जिससे कि वह

घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 के अधीन उपलब्ध सभी फायदों और संरक्षण का दावा करने की हकदार है । (पैरा 19)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2011]	(2011) 7 एस. सी. सी. 616 : **ए. सुभाष बाबू** बनाम **आन्ध्र प्रदेश राज्य और एक अन्य** ;	18
[2010]	(2010) 10 एस. सी. सी. 469 : **डी. वेलूस्वामी** बनाम **डी. पचईम्मल** ;	9,10,12
[2005]	(2005) 8 एस. सी. सी. 351 : **एम. एम. मल्होत्रा** बनाम **भारत संघ** ;	16,17,18
[1994]	ए. आई. आर. 1994 एस. सी. 853 : **एस. पी. चंगलवराया नायडू** बनाम **जगन्नाथ और अन्य** ;	11
[1988]	ए. आई. आर. 1988 एस. सी. 645 : **यमुनाबाई** बनाम **अनंतराव** ।	15,18

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2012 की दांडिक अपील सं. 2032-2033.

2008 की रिट याचिका (दांडिक) सं. 205 और 2009 के दांडिक पुनरीक्षण सं. 819 में रांची स्थित झारखंड उच्च न्यायालय के तारीख 9 अप्रैल, 2010 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपीलें ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री गौरव अग्रवाल और शंकर नारायण

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री महेश तिवारी, विष्णु तिवारी, डा. कैलाश चन्द और रतन कुमार चौधरी

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति रंजन गोगोई ने दिया ।

न्या. गोगोई – इजाजत दी जाती है ।

2. अपीलार्थी ने, जिसका प्रत्यर्थी से वर्ष 2006 में विवाह हुआ था,

घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'घरेलू हिंसा अधिनियम' कहा गया है) की धारा 12 के अधीन एक याचिका फाइल की थी जिसमें, नुकसानी और भरणपोषण सहित कतिपय अनुतोषों की ईप्सा की गई थी । अपीलार्थी ने उपर्युक्त आवेदन के लंबित रहने के दौरान अंतरिम भरणपोषण के लिए एक आवेदन फाइल किया था जो कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा तारीख 13 फरवरी, 2008 को 2,000/- रुपए प्रति मास की दर पर मंजूर किया गया था । विद्वान् विचारण न्यायालय के आदेश को विद्वान् सेशन न्यायाधीश द्वारा तारीख 9 जुलाई, 2008 को अभिपुष्ट कर दिया गया था । प्रत्यर्थी (पति) ने उपर्युक्त आदेश के विरुद्ध झारखंड उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका फाइल की ।

3. जब रिट याचिका लंबित थी, तब प्रत्यर्थी ने इस आधार पर तारीख 13 फरवरी, 2008 के आदेश को वापस लेने की ईप्सा की कि उसे बाद में इस बात का पता चल सका था कि अपीलार्थी के साथ उसका विवाह इस आधार पर शून्य था कि उक्त विवाह के समय अपीलार्थी का रोहित कुमार मिश्रा नामक व्यक्ति से पहले ही विवाह हो चुका था । प्रत्यर्थी-पति ने इसके समर्थन में विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष सक्षम प्राधिकारी द्वारा विशेष विवाह अधिनियम, 1954 (जिसे इसमें इसके पश्चात् '1954 का अधिनियम' कहा गया है) की धारा 13 के अधीन अपीलार्थी और उक्त रोहित कुमार मिश्रा के बीच तारीख 18 अप्रैल, 2003 को हुए विवाह का प्रमाणपत्र प्रस्तुत किया था ।

4. विद्वान् विचारण न्यायालय ने तारीख 7 अगस्त, 2009 के आदेश द्वारा उपर्युक्त आवेदन को इस आधार पर नामंजूर कर दिया कि 1954 के अधिनियम की धारा 13 के अधीन जारी किए गए प्रमाणपत्र के होते हुए भी अधिनियम की धारा 15 में प्रगणित शर्तों की विद्यमानता का सबूत पेश किया जाना अब भी अपेक्षित होगा और इसके पश्चात् ही अधिनियम की धारा 13 के अधीन जारी किए गए प्रमाणपत्र को विधिमान्य ठहराया जा सकता है ।

5. तारीख 7 अगस्त, 2009 के उपर्युक्त आदेश को प्रत्यर्थी-पति द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन में चुनौती दी गई थी जिसकी सुनवाई इसके पूर्व फाइल की गई रिट याचिका के साथ की गई थी । दोनों ही मामलों का निपटारा तारीख 9 अप्रैल, 2010 के आक्षेपित सामान्य आदेश द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए किया गया था कि 1954 के अधिनियम की धारा 13 के अधीन जारी किया गया तारीख 18 अप्रैल,

2003 का विवाह प्रमाणपत्र अपीलार्थी का रोहित कुमार मिश्रा नामक व्यक्ति के साथ प्रथम विवाह होने का निश्चित सबूत है जिसका प्रभाव अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच हुए विवाह को अकृत और शून्य करना था । तदनुसार, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि चूंकि अपीलार्थी प्रत्यर्थी की विधिक रूप से विवाहित पत्नी नहीं थी इसलिए वह विद्वान् निचले न्यायालयों द्वारा अनुदत्त भरणपोषण की हकदार नहीं थी । उच्च न्यायालय के उपर्युक्त आदेश के विरुद्ध अपीलार्थी-पत्नी द्वारा प्रस्तुत अपीलें फाइल की गई हैं ।

6. हमने अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउन्सेल श्री गौरव अग्रवाल और प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउन्सेल श्री महेश तिवारी को सुना है ।

7. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउन्सेल ने बलपूर्वक यह दलील दी है कि अपीलार्थी और रोहित कुमार मिश्रा के बीच इससे पूर्व विवाह होने संबंधी अभिकथन से अपीलार्थी द्वारा सभी प्रक्रमों पर इनकार किया गया था और उक्त तथ्य केवल तारीख 18 अप्रैल, 2003 के विवाह प्रमाणपत्र से सिद्ध नहीं हो जाता है । यह मान लेने पर भी कि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह शून्य था तो भी चूंकि पक्षकार एक-साथ रहते थे इसलिए विवाह की प्रकृति का संबंध अस्तित्व में था जिसके कारण अपीलार्थी घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 के अधीन भरणपोषण का दावा करने और उसे प्राप्त करने की हकदार होगी । उस विधायी इतिहास को प्रस्तुत करते हुए जिसके परिणामस्वरूप उपर्युक्त अधिनियमिति की गई थी, इस बात पर जोर दिया गया था कि संसद् के समक्ष प्रस्तुत किए गए विधेयक, अर्थात् घरेलू हिंसा से संरक्षण विधेयक, 2002 में व्यथित व्यक्ति और नातेदार की परिभाषा आरंभ में निम्नलिखित निबंधनों में की गई थी :–

"धारा 2. .....

(क) 'व्यथित व्यक्ति' से कोई ऐसी महिला अभिप्रेत है जो प्रत्यर्थी की नातेदार है या रही है और जिसका यह अभिकथन है कि वह प्रत्यर्थी द्वारा घरेलू हिंसा की शिकार रही है ।

(ख) ....

(ग) ....

(घ) ....

(ङ) ....

(च) ....

(छ) ....

(ज) ....

(झ) 'नातेदार' में ऐसा व्यक्ति शामिल है जिसकी रक्त, विवाह या दत्तक द्वारा नातेदारी है और जो प्रत्यर्थी के साथ रह रहा है ।''

इसके पश्चात्, संसदीय स्थायी समिति ने विधेयक के भिन्न-भिन्न खंडों पर विचार किया और यह सिफारिश की गई थी कि उस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए जो प्रस्थापित विधान द्वारा पूरा किया जाना ईप्सित है, अर्थात्, महिलाओं को घरेलू हिंसा और शोषण से संरक्षण प्रदान करने के लिए खंड (2)(i) में, जिसमें ''नातेदार'' की परिभाषा दी गई है, उपयुक्त रूप से संशोधन किया जाए जिससे कि इसमें उन महिलाओं को सम्मिलित किया जा सके जो कि विवाह के सदृश नातेदारी में तथा विधि द्वारा अविधिमान्य समझे जाने वाले विवाह में रह रही हैं । स्थायी समिति द्वारा की गई उपर्युक्त सिफारिश के अनुसरण में विधेयक के खंड (2)(i) में आने वाली ''नातेदार'' अभिव्यक्ति के स्थान पर अधिनियम की धारा 2 के खंड (च) में ''घरेलू नातेदारी'' अभिव्यक्ति शामिल की गई थी । विद्वान् काउन्सेल ने घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 में आने वाली ''व्यथित व्यक्ति'' और ''घरेलू नातेदारी'' की परिभाषा के प्रति निर्देश करके यह दलील दी कि ऐसे विवाहों में, जो बाद में अवैध पाए जाते हैं, या विवाह के सदृश नातेदारी में एक-साथ रहने वाली महिलाओं को घरेलू हिंसा अधिनियम के संरक्षात्मक आवरण में सम्मिलित करने संबंधी विधायी आशय पूर्णतः स्पष्ट है और उसे पूर्ण रूप से प्रभावी किया जाना चाहिए । यह दलील दी गई है कि उपर्युक्त मत को ध्यान में रखते हुए भले ही अपीलार्थी और प्रत्यर्थी का विवाह अपीलार्थी के पूर्व विवाह के कारण शून्य हो गया था, उक्त तथ्य स्वतः अपीलार्थी को घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 के अधीन भरणपोषण और अन्य अनुतोषों की ईप्सा करने से निर्हकित नहीं करेगा ।

8. आगे कार्यवाही करने से पूर्व, इस प्रक्रम पर घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 की धारा 2(क) और (च) में आने वाली ''व्यथित व्यक्ति'' और ''घरेलू नातेदारी'' अभिव्यक्तियों की परिभाषा की अवेक्षा करना उपयुक्त होगा :–

''(क) 'व्यथित व्यक्ति' से कोई ऐसी महिला अभिप्रेत है जो प्रत्यर्थी की घरेलू नातेदारी में है या रही है और जिसका अभिकथन है

कि वह प्रत्यर्थी द्वारा किसी घरेलू हिंसा का शिकार रही है ;

(ख)....................

(ग).....................

(घ).....................

(ङ).....................

(च) 'घरेलू नातेदारी' से ऐसे दो व्यक्तियों के बीच नातेदारी अभिप्रेत है, जो साझी गृहस्थी में एक साथ रहते हैं या किसी समय एक साथ रह चुके हैं, जब वे, समरक्तता, विवाह द्वारा या विवाह, दत्तक ग्रहण की प्रकृति की किसी नातेदारी द्वारा संबंधित है या एक अविभक्त कुटुम्ब के रूप में एक साथ रहने वाले कुटुम्ब के सदस्य हैं ।"

9. विद्वान् काउन्सेल ने ऋजुतापूर्वक **डी. वेलूस्वामी** बनाम **डी. पचईम्मल**[1] वाले मामले में समकक्ष न्यायपीठ द्वारा दिए गए विनिश्चय के प्रति भी ध्यान आकृष्ट किया जिसमें इस न्यायालय ने घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 2(च) के उपबंधों पर विचार किया और यह निष्कर्ष निकाला कि विवाह की प्रकृति की नातेदारी सामान्य विधि विवाह के समरूप है जिसमें यह अपेक्षित है कि इस तथ्य के सबूत के अलावा कि पक्षकार घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 2(थ) में परिभाषित किसी साझी गृहस्थी में एक साथ रहे थे, निम्नलिखित शर्तें पूरी की जानी हैं :–

"(क) दम्पत्ति को समाज के सामने पति-पत्नी की तरह बने रहना चाहिएं ।

(ख) वे विवाह करने की वैध आयु के होने चाहिएं ।

(ग) वे वैध विवाह करने के लिए अन्यथा अर्हित होने चाहिएं, जिसमें उनका अविवाहित होना भी है ।

(घ) उन्होंने स्वेच्छया सहवास किया हो और पर्याप्त समय तक समाज में पति-पत्नी की तरह बने रहे हों ।" .... (पैरा 33)

10. तथापि, विद्वान् काउन्सेल ने यह इंगित किया है कि **वेलूस्वामी** (उपर्युक्त) वाले मामले में विवाद्यक दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 में

---

[1] (2010) 10 एस. सी. सी. 469.

आने वाली "पत्नी" अभिव्यक्ति के अर्थान्वयन के संबंध में था और इसलिए घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 की धारा 2(च) के उपबंधों और अभिलिखित निष्कर्ष का उल्लेख करना इस मामले में उद्भूत होने वाले विवाद्यकों को विनिश्चित करने के लिए अपेक्षित नहीं था । इसके अलावा, यह इंगित किया गया है कि इस न्यायालय को उपर्युक्त मामले में अपनी राय व्यक्त करते समय घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण विधेयक, 2002 के भिन्न-भिन्न खंडों पर संसदीय स्थायी समिति द्वारा किए गए विचार-विमर्श पर विचार करने का अवसर नहीं मिला था । यह भी दलील दी गई है कि "विवाह की प्रकृति की नातेदारी" अभिव्यक्ति का सामान्य विधि विवाह से समीकरण करना और ऊपर अपेक्षित चार अपेक्षाएं अनुबद्ध करना विधि की किसी ज्ञात या स्वीकार्य नजीर या स्रोत पर आधारित नहीं है । तदनुसार, यह दलील दी गई है कि "विवाह की प्रकृति की नातेदारी" अभिव्यक्ति की परिधि और उसके विस्तार पर हमारे द्वारा विचार किया जाना है और उक्त प्रश्न को एक बृहत्तर न्यायपीठ को निर्देशित करना हर हालत में न्यायोचित होगा ।

11. प्रत्यर्थी-पति की ओर से विद्वान् काउन्सेल ने अपीलार्थी की ओर से दी गई दलीलों का विरोध करते हुए यह दलील दी है कि घरेलू हिंसा अधिनियम की धारा 2(च) में "विवाह की प्रकृति की नातेदारी" अभिव्यक्ति अंतःस्थापित करने के पीछे उद्देश्य उन महिलाओं को संरक्षण देना है जिन्हें पुरुष द्वारा पति के पूर्व विवाह होने संबंधी तथ्य को छिपाकर विवाह करने के लिए बहकाया गया है । यह अधिनियम एक ऐसा उपयोगी विधान है जो कि उन महिलाओं को भिन्न-भिन्न प्रकार के संरक्षण प्रदान करता है जिनका शोषण किया गया है या जिन्हें विवाह करने के लिए बहकाया गया है । विद्वान् काउन्सेल ने यह इंगित किया है कि तथापि, प्रस्तुत मामले में स्थिति विपरीत है । तारीख 18 अप्रैल, 2003 के विवाह प्रमाणपत्र से यह स्पष्ट होता है कि अपीलार्थी का रोहित कुमार मिश्रा नामक व्यक्ति से पहले विवाह हो चुका था और यह तथ्य उसे ज्ञात था किन्तु प्रत्यर्थी इसे नहीं जानता था । दूसरा विवाह, जो कि शून्य है और द्विविवाही संबंध भी पैदा करता है, अपीलार्थी द्वारा पति की जानकारी के बिना स्वेच्छया किया गया था । अतः, अपीलार्थी घरेलू हिंसा अधिनियम के अधीन किसी भी फायदे की हकदार नहीं थी । वास्तव में, प्रस्तुत मामले में भरणपोषण अनुदत्त करना दोषकर्ता को फायदा और संरक्षण प्रदान करने की कोटि में आएगा जो कि अधिनियम के घोषित उद्देश्य के विरुद्ध होगा । विद्वान् काउन्सेल ने यह दलील भी दी कि अपीलार्थी के आचरण से यह स्पष्ट होता है कि

उसने तात्विक तथ्यों को छिपाते हुए और दोषपूर्वक न्यायालय में समावेदन किया जिससे वह विधि या साम्या की दृष्टि से कोई भी अनुतोष प्राप्त करने से निर्हकित हो जाती है । इस संबंध में हमारे समक्ष **एस. पी. चंगलवराया नायडू** बनाम **जगन्नाथ और अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय का विनिश्चय प्रस्तुत किया गया है ।

12. मुकदमा लड़ने वाले पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउन्सेलों द्वारा दी गई दलीलों पर विचार करने के पश्चात् हमारा यह मत है कि उठाए गए सभी प्रश्न, अर्थात्, क्या अपीलार्थी और प्रत्यर्थी तारीख 4 दिसम्बर, 2006 को उनका विवाह होने के पश्चात् किसी साझी गृहस्थी में एक साथ रहे हैं/थे; यदि पक्षकार एक साथ रहे हैं/थे तो क्या इससे घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 की धारा 2(च) के अर्थान्तर्गत विवाह की प्रकृति की नातेदारी उत्पन्न हो जाती है; क्या **वेलूस्वामी** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय का विनिश्चय "विवाह की प्रकृति की नातेदारी" अभिव्यक्ति के संबंध में कोई प्रामाणिक निर्णय है और यदि ऐसा है तो क्या उसे किसी बृहत्तर न्यायपीठ को निर्दिष्ट करने की आवश्यकता है, असामयिक हो सकते हैं और इस समय उनका उत्तर देने की कोई आवश्यकता नहीं है । इसके विपरीत, प्रथमतः, मामले का अवलोकन नीचे उपदर्शित परिप्रेक्ष्य में किया जा सकता है ।

13. हमारे समक्ष प्रत्यर्थी ने यह दावा किया था (विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय के समक्ष) कि उसके और अपीलार्थी के बीच तारीख 4 दिसम्बर, 2006 को हिन्दू विधि के अनुसार धार्मिक कृत्यों द्वारा अनुष्ठापित विवाह अपीलार्थी और रोहित कुमार मिश्रा नामक व्यक्ति के बीच हुए पूर्व विवाह के कारण शून्य हो गया था । प्रत्यर्थी ने इसके समर्थन में विशेष विवाह अधिनियम, 1954 की धारा 13 के अधीन तारीख 18 अप्रैल, 2003 को जारी किए गए विवाह प्रमाणपत्र का अवलंब लिया । विद्वान् विचारण न्यायालय तथा उच्च न्यायालय ने एकमात्र उपर्युक्त विवाह प्रमाणपत्र के आधार पर कार्यवाही करते हुए पक्षकारों के बीच हुए विवाह की विधिमान्यता का अवधारण करने की कार्यवाही की थी यद्यपि दोनों ही न्यायालय भरणपोषण की कार्यवाही में अपनी अधिकारिता का प्रयोग कर रहे थे । तथापि, आज तक पक्षकारों के बीच हुए विवाह को किसी सक्षम न्यायालय द्वारा बातिल नहीं किया गया है । प्रथमतः इस बात का अवधारण

---

[1] ए. आई. आर. 1994 एस. सी. 853.

किया जाना है कि उपर्युक्त परिस्थिति का प्रभाव क्या होगा चूंकि यदि पक्षकारों के बीच हुआ विवाह विधि के अधीन अब भी अस्तित्व में है तो अपीलार्थी प्रत्यर्थी की वैध रूप से विवाहित पत्नी बनी रहेगी जिससे कि वह घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 के अधीन भरणपोषण और अन्य फायदों का दावा करने की हकदार होगी । वास्तव में, ऐसी स्थिति में, न्यायालय को इस प्रश्न पर विचार करने की आवश्यकता नहीं होगी कि क्या पक्षकारों के बीच नातेदारी विवाह की प्रकृति की नातेदारी है अथवा नहीं ।

14. स्वीकृततः, अपीलार्थी और प्रत्यर्थी दोनों हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के उपबंधों द्वारा शासित होते हैं । हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 11 में यह स्पष्ट किया गया है कि इस अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात् अनुष्ठापित कोई भी विवाह, "यदि वह धारा 5 के खंड (i), (iv) और (v) में विनिर्दिष्ट शर्तों में से किसी एक का भी उल्लंघन करता हो तो, अकृत और शून्य होगा और विवाह के किसी पक्षकार द्वारा दूसरे पक्षकार के विरुद्ध उपस्थापित अर्जी पर अकृतता की डिक्री द्वारा ऐसा घोषित किया जा सकेगा" ।

15. इस न्यायालय ने **यमुनाबाई** बनाम **अनंतराव**[1] वाले मामले में हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 11 के उपबंधों पर विचार करते समय यह मत अपनाया है कि धारा 11 के अंतर्गत आने वाला विवाह विधितः शून्य है, अर्थात् आरंभ से ही शून्य है । ऐसे विवाह को इस प्रकार अनदेखा कर देना चाहिए जैसे कि वह विधि की दृष्टि से बिल्कुल भी अस्तित्व में नहीं है । इस न्यायालय द्वारा आगे यह अभिनिर्धारित किया गया था कि ऐसे विवाह की अकृतता की औपचारिक घोषणा करना कोई आज्ञापक अपेक्षा नहीं है हालांकि विवाह के दोनों पक्षकारों के पास ऐसा विकल्प उपलब्ध होता है ।

तथापि, यह अवेक्षा की जानी चाहिए कि **यमुनाबाई** (उपर्युक्त) वाले मामले में पक्षकारों के बीच न तो प्रथम विवाह के अस्तित्व में होने और न ही उसकी विधिमान्यता के संबंध में कोई विवाद था जिसके आधार पर दूसरे विवाह को विधितः शून्य ठहराया गया था ।

16. इस न्यायालय द्वारा **एम. एम. मल्होत्रा** बनाम **भारत संघ**[2] वाले पश्चात्वर्ती विनिश्चय में इसी प्रकार का मत अपनाया गया था जिसमें

---

[1] ए. आई. आर. 1988 एस. सी. 645.

[2] (2005) 8 एस. सी. सी. 351.

यमुनाबाई (उपर्युक्त) वाले मामले में अभिव्यक्त मत की भी अवेक्षा की गई थी और उसे दोहराया गया था ।

17. तथापि, उन तथ्यों का कुछ विस्तार से उल्लेख करना आवश्यक होगा जिनके आधार पर **एम. एम. मल्होत्रा** (उपर्युक्त) वाला विनिश्चय किया गया था ।

अपीलार्थी एम. एम. मल्होत्रा के विरुद्ध अन्य बातों के साथ-साथ विभागीय कार्यवाही में बहुल विवाह करने का आरोप लगाया गया था । जारी किए गए आरोप पत्र के उत्तर में यह इंगित किया गया था कि बहुल विवाह का अभिकथन बिल्कुल भी मान्य नहीं है चूंकि अपीलार्थी (एम. एम. मल्होत्रा) द्वारा इस घोषणा के लिए कि प्रत्यर्थी (पत्नी) डी. जे. बसु नामक व्यक्ति से अपने पूर्व विवाह के कारण उसकी पत्नी नहीं थी, फाइल किए गए वाद में उक्त तथ्य, अर्थात् पूर्व विवाह को पत्नी द्वारा स्वीकार किया गया था जिसके परिणामस्वरूप पक्षकारों के बीच विवाह के अविधिमान्य होने की घोषणा की गई थी । अतः, पुनः **एम. एम. मल्होत्रा** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय की राय ऐसी स्थिति में दी गई थी जहां कि पति-पत्नी में से किसी एक के पूर्व विवाह होने संबंधी तथ्य के बारे में कोई विवाद नहीं था ।

18. तथापि, प्रस्तुत मामले में अपीलार्थी ने अपने अभिवचनों में स्पष्टतः, सुनिश्चित और संगत रूप से इस बात से इनकार किया था कि उसका रोहित कुमार मिश्रा नामक किसी व्यक्ति से विवाह हुआ था । अपीलार्थी द्वारा तारीख 18 अप्रैल, 2003 के विवाह प्रमाणपत्र की विधिसम्मतता, प्रामाणिकता और वास्तविकता को भी प्रश्नगत किया गया है । यद्यपि पूर्वोक्त अधिनियम की धारा 11 शून्य विवाह के किसी भी पक्षकार को ऐसे विवाह को अविधिमान्य/अकृत करने की घोषणा की ईप्सा करने का विकल्प प्रदान करती है तथापि, ऐसे विकल्प का प्रयोग करने के बारे में यह नहीं समझा जा सकता है कि वह सभी स्थितियों में स्वेच्छया है । ऐसी स्थितियां उद्भूत हो सकती हैं जब सामान्य नियम से विचलन करते हुए किसी ऐसे विवाह की अकृतता की घोषणा करने के संबंध में न्यायालय का सहारा लेने पर जोर दिया जा सकता है जिसमें पति-पत्नी में से एक द्वारा विवाह के शून्य होने का दावा किया गया है । हमारी राय में, **यमुनाबाई** (उपर्युक्त) और **एम. एम. मल्होत्रा** (उपर्युक्त) वाले मामलों में

इस न्यायालय के विनिश्चय का यही सही विनिश्चयाधार है । इस संबंध में, हम **ए. सुभाष बाबू** बनाम **आन्ध्र प्रदेश राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा दिए गए हाल ही के विनिश्चय का उल्लेख कर सकते हैं जिसमें इस प्रश्न पर कार्यवाही करते समय कि क्या पति के प्रथम विवाह की विधिमान्यता के दौरान किए गए दूसरे विवाह की पत्नी, पति द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 494 और 495 के अधीन अपराध कारित करने का अभिकथन करने वाले परिवाद को कायम रखने के लिए दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 198(1)(ग) के अधीन "व्यथित व्यक्ति" होगी । नीचे उद्धृत लेखांश इस मुद्दे पर प्रभावी रूप से प्रकाश डालता है :–

> "यद्यपि विधि में विनिर्दिष्ट रूप से किसी भी पक्षकार पर विवाह की अकृतता की घोषणा की ईप्सा करने की बाध्यता अधिरोपित नहीं की गई है और पक्षकार न्यायालय का सहारा लिए बिना विवाह को अकृत मानने के लिए स्वतंत्र होंगे, तथापि, ऐसा मार्ग न तो विवेकपूर्ण है और न ही आशयित है और पूर्वावधानी और/या अभिलेख के प्रयोजनार्थ हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 11 के निबंधनानुसार घोषणा की मांग की जाएगी । अतः, जब तक हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 11 के अधीन अनुध्यात घोषणा किसी सक्षम न्यायालय द्वारा नहीं कर दी जाती तब तक वह महिला जिसके साथ दूसरा विवाह अनुष्ठापित किया जाता है, भारतीय दंड संहिता की धारा 494 के अर्थान्तर्गत पत्नी बनी रहती है और वह अपने पति के विरुद्ध परिवाद फाइल करने की हकदार होगी ।"

19. प्रस्तुत मामले में, यदि प्रत्यर्थी के अनुसार उसके और अपीलार्थी के बीच विवाह अपीलार्थी और रोहित कुमार मिश्रा के बीच पूर्व विवाह के कारण शून्य हो गया था तो अपीलार्थी द्वारा उपर्युक्त मुद्दे पर उठाए गए अत्यंत विवादास्पद प्रश्नों को ध्यान में रखते हुए प्रत्यर्थी को सक्षम न्यायालय से आवश्यक घोषणा प्राप्त करनी चाहिए थी । सक्षम न्यायालय द्वारा पक्षकारों के बीच विवाह की अकृतता या बातिलीकरण की घोषणा के पश्चात् ही इस प्रश्न पर विचार करना न्यायोचित होगा कि क्या पक्षकार "विवाह की प्रकृति की नातेदारी" में एक साथ रहे थे । अकृतता की किसी

[1] (2011) 7 एस. सी. सी. 616.

विधिमान्य डिक्री या आवश्यक घोषणा के अभाव में न्यायालय को इस आधार पर कार्यवाही करनी होगी कि पक्षकारों के बीच नातेदारी विवाह की है न कि विवाह की प्रकृति की । हम इस बात पर भी जोर देना चाहेंगे कि पक्षकारों के बीच विवाह की विधिमान्यता का कोई भी निर्धारण पक्षकारों द्वारा और उनके बीच किसी समुचित कार्यवाही में किसी सक्षम न्यायालय द्वारा विधि की अन्य सभी अपेक्षाओं का अनुपालन करते हुए किया जा सकता था । अपीलार्थी और रोहित कुमार मिश्रा के दावाकृत पहले विवाह के समर्थन में विशेष विवाह अधिनियम, 1954 की धारा 13 के अधीन जारी किया गया विवाह प्रमाणपत्र प्रस्तुत करना मात्र किसी भी न्यायालय के लिए, जिसमें उच्च न्यायालय भी है, पक्षकारों की वैवाहिक स्थिति के संबंध में और वह भी भरणपोषण के लिए की गई किसी सांपार्श्विक कार्यवाही में संपूर्ण और प्रभावी विनिश्चय करने के लिए पर्याप्त नहीं था । परिणामस्वरूप, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि प्रस्तुत मामले में जब तक अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह का अविधिमान्यकरण किसी सक्षम न्यायालय द्वारा नहीं हो जाता है तब तक इस आधार पर कार्यवाही करना ही सही होगा कि अपीलार्थी प्रत्यर्थी की पत्नी बनी हुई है जिससे कि वह घरेलू हिंसा अधिनियम, 2005 के अधीन उपलब्ध सभी फायदों और संरक्षण का दावा करने की हकदार है ।

20. हमारे उपर्युक्त निष्कर्ष के कारण उठाए गए किसी भी अन्य विवाद्यक पर विचार करना पूर्णतः अनावश्यक और अव्यावहारिक हो जाएगा । ऐसी कार्यवाही से निश्चित रूप से बचना चाहिए ।

21. तदनुसार, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी के पक्ष में किए गए भरणपोषण के अनुदान में किया गया हस्तक्षेप बिल्कुल भी न्यायोचित नहीं था । तदनुसार, उच्च न्यायालय द्वारा पारित तारीख 9 अप्रैल, 2010 का आदेश अपास्त किया जाता है और प्रस्तुत अपीलें मंजूर की जाती हैं ।

अपीलें मंजूर की गईं ।

ग्रो.